अध्ययन सामग्री

विषय- हिन्दी

सेमेस्टर- प्रथम(01) स्नातकोत्तर

प्रश्न पत्र- तृतीय(cc-03)

संतकाव्य की सामान्य विशेषताएँ

पदनाम- डॉ स्मिता जैन

एसोसिएट प्रोफेसर

हिंदी विभाग

एच डी जैन कॉलेज, आरा

11:39

Scanned with CamScanner

३अ. ३ संत काव्य की सामान्य विशेषताएँ

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल को निर्गुण और सगुण भक्ति काव्यधारा इन दो भागोंमें विभाजित किया जाता है । इस काल में निर्गुण भक्ति पद्धति अत्याधिक प्रभावी रही हैं। निर्गुण भक्तिधारा में दो शाखाएँ विकसित हुई एक ज्ञानाश्रयी शाखा और दुसरी प्रेममार्गी शाखा। ज्ञानाश्रयी शाखा को संत काव्य नाम से संबोधित किया जाता हैं। अतः निर्गुण भक्ति, ज्ञानाश्रयी शाखा तथा संत काव्य आदि नाम संबोधन भक्तिकाल के एक विशिष्ट काव्य धारा को ही दिए गए हैं। इसके प्रवर्तक संत कबीर माने जाते हैं। इस काव्य की यह विशेषता मानी जाती हैं कि इसमें कहीं पर भी कृत्रिमता नहीं दिखाई देती हैं। इसमें सहज प्राकृतिक सौंदर्य है जो मन मस्तिष्क को एक साथ हर लेता हैं। संत साहित्य में अधिक तर आध्यात्मिक विषयों की अभिव्यक्ति हुई है। निर्गुण संत काव्य ने अनेक धार्मिक सम्प्रदायों के प्रभावों को ग्रहण किया है। यह साधना तथा काव्यवैभव दोनो दृष्टि से बहुत ही सम्पन्न हैं। संत कवियों की विचारधारा नीजी ज्ञान और अनुभूतियाँ पर आधारित है। इस काव्य धारा की सामान्य प्रवृत्तियाँ एवं सामान्य विशेषताओं को विवेचन निम्न प्रकार दिया जा रहा हैं ।

निर्गुण ईश्वर में विश्वास :

सभी संत कवियों ने ईश्वर के सम्बन्ध मे अपने विचार व्यक्त किए हैं । सभी वर्णो और समुची जातियों के लिए वह निर्गुण एक मात्र ज्ञानगम्य हैं । वह अविगत हैं । वेद पुराण तथा स्मृतियाँ जहाँ तक नही पहुँच सकती –

'मनिर्गुण राम जपहुरे भाई, अविगत की गति लखी न जाई ।'

ये सन्त कवि सूर और तुलसी के समान सगुण और निर्गुण के समन्वयवादी नही है ।

Scanned with CamScanner

इन्होंने ईश्वर के सगुण रुप का विरोध किया हैं। कवि का कहना है –

दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना,
राम नाम का मरम है जाना ।

निर्गुण ब्रम्ह के सम्बन्ध में सन्त कबीरदासजी ने उत्कृष्ट उदाहरण देकर समझाया है –

'जा को मुँह माथा नही, नाही रुप कुरुप ।
पुष्प गंध ते पातरा, ऐसा रुप अनुप ।।'

संत कबीर एवं संत कवियों के अनुसार ईश्वर का अत्यंत सूक्ष्म रुप है वह दिखाई नही देता । जिस प्रकार कोई पुष्प है परंतु उसमें समाहित गंध दिखाई नही देती उसी प्रकार ईश्वर घर घरमें विराजमान है । वह प्रत्येक मनुष्य के ह्रदय में वास करता है ।

बहुदेव वाद तथा अवतारवाद का विरोध :

भक्तिकालीन निर्गुण संत कवियोंने बहुदेववाद तथा अवतारवाद का विरोध किया है। उन्होंने इस भावना का निर्भिकता पुर्वक खन्डन किया है। इसका कारण राजनीतिकता का परिणाम तथा शंकराचार्य के अद्वैत का प्रभाव था। शासक वर्ग मुसलमान एकेश्वर वादी था। हिन्दु–मुस्लिम धर्मो में विद्वेषाग्निको शांत कर एकता की स्थापना के लिए इन कवियों ने एकेश्वर वाद का संदेश देकर बहुदेववाद तथा अवतार का विरोध कर ब्रम्हा, विष्णू, महेश को मायाग्रस्त कहा और उनकी निंदा की है। उनका विश्वास था कि सृष्टि का कर्ता निराकार ब्रम्ह है। चरणदास नें ब्रम्ह के सम्बन्ध में लिखा है –

'यह सिर नवे न राम दूं, नाही गिरीयो टूट ।
आन देव नही परसिये, यह तन जाये छूट ।।'

सद्गुरु का महत्व :

संत कवियों ने अपनी रचनाओं में गुरू को अधिक महत्व दिया है । उनके अनुसार गुरू ही सर्वश्रेष्ठ है । उन्होंने गुरु को ज्ञानी बताते हुए ईश्वर से भी अधिक महत्व दिया है । गुरु का महत्व को स्पष्ट करते हुए कबीरदास जी ने लिखा है –

'गुरू गोविन्द दोऊ खडे काके लागुँ पाइ ।
बलिहारी गुरु आपने जिन गोविन्द दियो बताई ।।'

इन कवियों का विश्वास है कि राम की कृपा भी तभी होती है जब गुरु की कृपा होती है । बिना गुरु की कृपा परमात्मा की कृपा सम्भव नही है । इसिलिए संत कवियों ने गुरु को साक्षात परमात्मा माना है । अतः निर्गुण भक्त कवि सगुण भक्त कवियों की अपेक्षा गुरु को अधिक महत्व देते हैं।

Scanned with CamScanner

जाति-पाति का विरोध :

निर्गुण संत कवियों ने जाति-पाति का विरोध किया है । मध्य युग कालीन समाज में वर्ण भेद और वर्ग भेद तथा जाति भेद का अधिक प्राबल्य था, फिर संत कबीर ने इनका कसकर विरोध किया । संत कबीर बुध्द की समतावादी दृष्टी के पुरस्कर्ता थे । उनके अनुसार न कोई छोटा है न कोई बडा है, ईश्वर की पूजा तथा आराधना करने का अधिकार प्रत्येक मनुष्यमात्र को है । इस दृष्टीमें भगवत भक्ति में सबको समान अधिकार है । कबीर के अनुसार –

'जाति-पाति पुछे नहीं कोई ,
हरि को भजे सो हरि का होई ।'

इन सन्तों को हिन्दू-मुसलमानों मे एकता स्थापित करने के लिए सामान्य भक्ति मार्ग की प्रतिष्ठा भी करनी थी । इस भेद के निवारणार्थ इनके स्वर में प्रखरता और कटुता आई –

अरे इन दाउन राहन पाई ।
हिन्दुअन की हिन्दुआई देखी, तुरकन की तुरकाई ।।

कबीर दासजी इसी प्रकार कहते है –

''तू ब्राम्हण मैं काशी का जुलाहा चीन्ह न मोर गियाना ।
तू जो बामण बामणी जाया और राह है क्यों नही आया ।।''

रुढियों और आडम्बरों का विरोध :

सभी निर्गुण संत कवियों ने रुढियों, मिथ्या आडम्बरों तथा अंधविश्वासों की कटू आलोचना की है । इन कवियों ने तत्कालीन समाज में पाई जानेवाली इन कुप्रवृत्तियों का डटकर विरोध किया है । इन्होंने मूर्तिपूजा, धर्म के नाम पर की जानेवाली हिंसा, तीर्थ, व्रत, रोजा, नमाज, हजयात्रा आदि बाह्यडम्बरों का डंके की चोट पर विरोध किया । इन्होंने निर्भयता से तत्कालीन समाज को सही रास्ता दिखाने का प्रयास किया तथा तत्कालीन धर्म और सम्प्रदायों में नीहित झूठी मान्यताओं का विरोध किया । परिणामतः संत कवियों को हिन्दू तथा मुसलमान दोनों की ओर से प्रताडना सहनी पडी । प्रायः इन्हों ने अपने युग के वैष्णव सम्प्रदाय को छोड़कर शेष सभी धर्म सम्प्रदाय की कटु आलोचना की है –

'बकरी पाती खात है, ताकी काढी खाल ।
जे जन बकरी खात है, तिन को कौन हवाल ।।'

कबीर मुस्लिम धर्म सम्प्रदाय की आलोचना करते हुएँ कहते है –

'कांकर पाथर जोरिके, मस्जिद लई बनाय ।
ता चढि मुल्ला बांग दे, बहिरा हुआ खुदाय ।।'

हिन्दू धर्म की आलोचना करते हुएँ कहते है –

'पत्थर पुजै हरि मिलें, तो मैं पुजुँ पहार ।
ताते वह चक्की य संसार ।।'

Scanned with CamScanner

रहस्यवाद :

निर्गुण संत कवियों में रहस्यवाद की भावना मुख्य रुप में दिखाई देती है । रहस्य की दृष्टी से इनका साहित्य अनुपम है । संत सम्प्रदाय में प्रेमासक्ति और रहस्यमयता की प्रवृत्तियाँ विठ्ठल सम्प्रदाय से आयी है । प्रणयाभूति के क्षेत्र में पहुँचकर ये खण्डन–मण्डन की प्रकृति को भूल जाते है और इनका मृदुल–ह्मदय तरल हो जाता है । विरहानुभूति की अभिव्यक्ति में इन्हें पर्याप्त सफलता मिली है । सन्त काव्य में मुख्यतः अलौकिक प्रेम की अभिव्यंजना हुई जिसे रहस्यवाद की भी संज्ञा दी गई है । साधना के क्षेत्र में जो ब्रम्ह है, साहित्य के क्षेत्र में वही रहस्यवाद है । सन्तों का रहस्यवाद शंकर के अद्वैतवाद से प्रभावित है –

'जल में कुम्भ कुम्भ में जल है भीतर बाहर पानी ।
फूटा कुम्भ जल जलहिं समाना, यह तत कथौ गयानी ।।'

संत कवियों के रहस्यवाद पर योग का स्पष्ट प्रभाव है जहाँ की इंगला,पिंगला और सहस्त्रदल कमल आदि प्रतीकों का प्रयोग है । अतः दोनों प्रकार की ब्रम्हानुभूति योगात्मक रहस्यवाद के अन्तर्गत आयेगी । इनमें विशुध्द भावात्मक रहस्यवाद भी मिलता है, जहाँ प्रणयानुभूति की निश्चल अभिव्यक्ति हुई है –

'आयी न सकौ तुज्झ पै, सकुं न तुज्झ बुलाई ।
जियरा यों ही लेहेंगे विरह तपाई तपाई ।।'

संत कवियों का रहस्यवाद भारतीय परम्परा के अनुकुल है और उस पर वेदों का प्रभाव है ।

भजन तथा नामस्मरण

निर्गुण संत कवियों ने भजन तथा नामस्मरण को अधिक महत्व दिया है । भजन तथा नामस्मरण के संबंध में उनकी यह धारणा है कि भजन, किर्तन या नामस्मरण मन ही मन में होना चाहिए । उसमें किसी भी प्रकार का दिखावा या ढोंग न हो । भजन तथा नामस्मरण से परमेश्वर की प्राप्ति होती है । हर व्यक्ति को भजन, किर्तन तथा नामस्मरण करने का अधिकार है वह अगर सच्चे मन से ईश्वर का स्मरण करता है तो उसे उसकी प्राप्ति संभव है । इस संबंध में कबीर का कहना है –

''सहजो सुमिरन कीजिये हिरदै माही छिपाई ।
होठ होठ सूंना हिलै, सकै नही कोई पाई ।''

प्रेम की आवश्यकता को महत्व देते हुए कबीर कहते है –

''पोथी पढ़ि पढ़ि जगमुआ, पंडित भया न कोई,
ढाई आखर प्रेम के, पढै सो पंडित होई ।।''

लोकसंग्रह की भावना :

निर्गुण संत कवि पारिवारिक जीवन जीनेवाले व्यक्ति रहे हैं । वे नाथ पंथियों के समान केवल योगी नही थे । यही कारण [illegible] णी में जीवनगत अनुभव की सर्वांगीणता है, सन्तों की साधना में वैयक्तिकता क [illegible] क अधिक है । सन्तों ने आत्मशुध्दि पर

64/340

Scanned with CamScanner

अधिक बल दिया है। ये लोग संत, कवि और भक्ति आंदोलन के उन्नायक है, वहाँ वे समाज सुधारक भी है। यही कारण है कि हिन्दी के अनेक विचारकों ने कबीर को क्रांतिकारी सामाजिक नेता भी माना है। कृष्ण धारा के कवियों के समान संत कवियों ने समाज से अपनी आँखे नहीं फिरा ली थी। सन्त काव्य में उस समय का समाज प्रतिबिम्बित है। इनकी समस्त वाणी का सार ही कर्मण्यता है।

श्रृंगार वर्णन एवं विरह वर्णन की मार्मिक उक्तियाँ :

सम्पूर्ण संत साहित्य में श्रृंगार एवं शान्त रस का चित्रण अधिक रुप में हुआ है। इन कवियों ने संयोग और वियोग इस प्रणय की दोनों अवस्थाओं का अत्यंत कलात्मक एवं मनोहारी चित्रण किया है। उपदेश परक सूक्तियों में शान्त रस की व्यंजना हुई है। कहीं–कहीं इनका स्वर कर्कश हुआ है किन्तु वहाँ लोक कल्याण की भावना रही है। संत वाणियों का काव्य पक्ष उनकी प्रणयोक्तियों में ही यथार्थ रुपसे निखर पाया है। नीचे कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य है –

'विरहिन उभी पंथ सिर पंथी बुझै धाइ।
एक शुध्द कहि पीव का कबरे मिलेंगे आइ ।।'

संत साहित्य में संयोग पक्ष के अंतर्गत रुपाकर्षन, प्रियामिलन, प्रथम समागम, हर्षोल्लास, मिलनोत्कण्ठा, झुला–झुलना आदि का वर्णन मिलता है। इस काव्य में वियोग पक्ष में प्रिय को विदेश जाने से रोकना, विरह–जनित काम–दशाओं का वर्णन, काम आदि के द्वारा प्रियतम का संदेश प्रेषण आदि वर्णन किया है। संत कवियों का श्रृंगार रस चाहे लौकिक हो या अलौकिक, उसमें एक अनुपम माधुर्य रस है। वह लौकिक रुपमें जितना आल्हाददायक है, अलौकिक रुप में उतना ही आनंददायक है। संत कवियों का श्रृंगार वर्णन भी इनके व्यक्तित्व धर्म और दर्शन के समान कुछ विलक्षण तथा निराला है। इनके श्रृंगार में दिव्य रस की आर्द्रता है – वासना की अविलता नहीं।

नारी के प्रति दृष्टीकोण :

निर्गुण सन्त कवियों ने नारी संबंधी अपने विचारों को खुलकर व्यक्त किया है। इन कवियों ने एक ओर नारी की निंदा–नालस्ती की है, तो दुसरी ओर पतिव्रता नारी की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा भी की है। सन्त कवियों ने नारी को माया का प्रतीक माना है। इन्होंने कनक और कामिनी को दुर्गम घाटियाँ माना है। कबीर का कहना है –

'नारी की झाई परत अन्धा होत भुजंग।
कबिरा तिनकी कहा गति नित नारी के संग ।।'

पतिव्रता नारी की प्रशंसा करते हुए कबीर कहते है –

'पतिव्रता मैली भली, कानी कुचित कुरुप।
पतिव्रता के रुप पर वारों कोटी सरुप ।।'

कबीर का यह दृष्टीकोण उदा[illegible]चायक है। उनकी दृष्टी में पतिव्रता का आदर्श उनके साधना के निकट पडता [illegible]तिव्रता नारी में एक के प्रति निष्ठावान,

65/340

Scanned with CamScanner

आसक्ति, असिम प्रेम साहस और त्याग भावना से वे प्रभावित थे । कबीर माया के दो रुप सत् माया तथा असत् माया मानते है । संत कवियों ने सत् को स्वीकार कर असत् को अस्वीकार कर उसकी घृणा की है ।

माया से सावधानता :

निर्गुण संत कवियों ने मायासे सावधान रहने का उपदेश दिया है । क्यों कि रमैया की दुल्हन ने सबको बाजार में लुट लिया है और ब्रम्ह, विष्णु और महेश भी उसी के वशीभूत है । यह भगवान से मिलने का मार्ग में बहुत बडी बाधा है । यह माया महा ठगिनी है । इसने मधुर वाणी बोलकर अपनी तिरगुण फांस में सबको फँसा लिया है ।

'माया महा ठगिनी हम जानी
तिरगुन फाँस लिए वह डोले, बोले माधुरी बानी'

भाषा एवं शैली :

निर्गुण संत कवियोंकी भाषा जन सामान्य की भाषा है । इनके काव्य में मुख्यतः गेयमुक्तक शैलीका प्रयोग हुआ है । सभी कवि अशिक्षित थे । इन्होंने बोलचाल की भाषा को ही अपने अभिव्यक्ति का साधन माना । संत कवि अपने मत का प्रचार करने हेतु भ्रमण करते थे, अतः इनकी भाषा खिचडी या साधुक्कडी थी । इसमें अवधी, ब्रज खडी बोली, पूर्वी हिन्दी, फारसी, अरबी, राजस्थानी, पंजाबी भाषाओं के शब्दों का सम्मिश्रण हो गया है ।

संत कवियों की भाषा में पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग भी मिलता है जो कि इन्होंने अपने पुर्ववती सम्प्रदाय से लिए हुए है। जैसे–शुन्य, अनहद, निर्गुण, सगुण और अवधुत आदि। नाथ पंथियो द्वारा प्रयुक्त इंगला,पिंगला, आदि शब्दों का भी इन्होंने यथावत प्रयोग किया है। डॉ. शिवकुमार शर्मा इनकी भाषा के संबंध में लिखते हैं – ''इनकी भाषा आडम्बर विहीन सरल है। इन्हों ने उसे कहीं भी आलंकारिता से लादने का प्रयत्न नही किया है किन्तु अनुभूति की तीव्रता के कारण उसमें काव्योचित सभी गुण आ गये है।''

शैली :

संत काव्य में गेय मुक्तक शैली का प्रयोग हुआ है । रीति काव्य के सभी तत्व, भावात्मकता, सूक्ष्मता, संगीतात्मकता, वैयक्तिकता और कोमलता आदि इनकी वाणी में मिलते है ।

अलंकार :

निर्गुण संत कवियों की काव्य रचनाओं में रुपक, उपमा, दृष्टांत, समासोक्ति, अन्योक्ति, वक्रोक्ति, उत्प्रेक्षा व्यतिरेक आदि अलंकारों का प्रयोग हुआ है ।

Scanned with CamScanner

छंद :

निर्गुण संत कवियों ने अपने विचारों की अभिव्यक्ति 'साखी और सबद' के माध्यम से की है। साखियोंकी रचना दोहा, छंद में हुई है। साथ ही चौपाई, कविता, हंस पद आदि छंदो का प्रयोग हुआ है।

Scanned with CamScanner